ख़य्याम : जिनकी सारी फिल्में मील का पत्थर बनीं

चर्चित लेखक और सिनेमा के विद्वान यतींद्र मिश्र ने 'लता सुर गाथा' में लता मंगेशकर जी से पूछा कि उनका गाया कौन सा गाना है जिसे वे नूरजहां की आवाज़ में सुनना चाहेगीं. उन्होंने कहा, फ़िल्म रज़िया सुल्तान' का 'ऐ दिले नादां'. सोचिए, वे लता मंगेशकर जिनका फ़िल्म संगीत पर एकतरफ़ा प्रभुत्व रहा है, जिनके पास एक से एक नायाब गाने हैं, वे जिनके ज़रा सा आंखें तरेर देने पर प्रोडूसर और संगीतकार की सांसें रुक जाया करती थीं. जो संगीतकार मदन मोहन को अपना भाई मानती थीं, जो रोशन लाल जी को अपनी फ़िल्म 'भैरवी' के लिए बतौर संगीतकार लेना चाहती थीं, जिन्हें खेमचंद प्रकाश ने आकाश पर बैठाया, वे इन सबको छोड़कर 'रज़िया सुल्तान' के मौसिकीकार मोहम्मद ज़हूर हाशमी 'ख़य्याम' साहब का गाना चुनें तो अपने आप में यह ख़य्याम के परिचय से कम नहीं है.

हालांकि इसके अलावा भी काफ़ी कुछ और है जो मोहम्मद ज़हूर को 'ख़य्याम' बनाता है. पहले यह गाना सुन लिया जाए, फिर आगे बढ़ते हैं. इस गीत के बोल जांनिसार अख्तर साहब के हैं.

https://www.youtube.com/watch?v=kvuhU5Y0rlM&feature=youtu.be

जब लोग भूल गए कि दिलीप कुमार फ़िल्म के हीरो हैं

'धुनों की यात्रा' में पंकज राग लिखते हैं, 'संगीत में सुकून की बात हो तो ख़य्याम याद आते हैं. भाग-दौड़, परेशानी और शोर-शराबे के बीच भी ख़य्याम का संगीत एक शांत स्निग्ध महक के आगोश में ले लेता है.' पंकज राग के मुताबिक़ एक दफ़ा खय्याम अपने दौर के मशहूर संगीतकार जीए चिश्ती के पास काम की तलाश में गए. चिश्ती साहब अपनी ही धुन का एक टुकड़ा भूले हुए बैठे थे. न उन्हें याद आ रहा था, न उनके साजिंदों को. पास खड़े ज़हूर मियां ने कहा कि कहें तो वे सुना सकते हैं. चिश्ती ने अपनी ही धुन का टुकड़ा जब ज़हूर मियां से सुना तो उनके मुरीद हो गए और उन्हें अपना असिस्टेंट रख लिया. यह अलग बात है कि चिश्ती साहब असिस्टेंटों को पैसे नहीं देते थे.

पैसों की क़िल्लत के चलते खय्याम ने कभी फ़ौज की नौकरी की तो कभी 'शर्माजी' के तख़ल्लुस से संगीत रचा. कहीं बात बनी, कहीं रह गयी. 1953 में एक फ़िल्म आई थी 'फुटपाथ'. प्रोड्यूसर चंदू लाल शाह और फ़िल्म के हीरो 'शर्माजी' के काम से इतने मुत्तासिर हुए कि उन्हें साइन कर लिया पर शर्त रखी

कि वे 'ख़य्याम' के नाम से संगीत रचेंगे. बाकी फिर इतिहास हो गया. इस फ़िल्म का गाना 'शामे ग़म की क़सम, आज ग़मगीं हैं हम' इतना मशहूर हुआ, इतना मशहूर हुआ कि लोग यह भी भूल गए कि इसमें दिलीप कुमार ने अभिनय किया था. इस गीत को ध्यान से सुनिए क्यूंकि इसकी सफलता इसके यंत्रों की वजह से भी थी.

https://youtu.be/qYrzOxANjj4

खुद ख़य्याम के मुताबिक इस गीत में नयापन इसलिए भी था कि पहली बार पारंपरिक वाद्य यंत्रों के बजा स्पेनिश गिटार और डबल बास से ताल (रिदम) दी गई.

हालांकि 'फुटपाथ' की सफलता भी ख़य्याम को कुछ ख़ास काम नहीं दिला पायी. पर जितना भी उन्हें मिल रहा था उसमें वे कमाल का संगीत दे रहे थे. हालांकि अब यह बात उठने लगी थी कि उनके ज़्यादा रेंज नहीं है और वे अपनी धुनों को दोहराते हैं. हो सकता है यह बात सही हो, पर जहां तक मिठास की बात आती है, राग पहाड़ी और यमन का जिस तरह ख़य्याम ने इस्तेमाल किया है वैसा शायद ही किसी और ने किया हो.

इस बीच 'शगुन' के गाने बड़े हिट हुए. जगजीत कौर का गया 'तुम अपना रंजो-ग़म' इतना मकबूल हुआ कि असल ज़िंदगी में भी दोनों ने खुशियां और ग़म साझे कर लिए. मोहम्मद रफ़ी की आवाज़ में राग पहाड़ी में बना गाना 'पर्बतों के पेड़ों पर शाम का बसेरा है, सुरमई उजाला है चम्पई अंधेरा है' बहुत ख़ूबसूरत बन पड़ा.

राज कपूर ने साहिर और ख़य्याम को साथ नहीं रखा

बनती-बिगड़ती बात के बीच रमेश सहगल ने राज कपूर को लेकर फ्योदोर दोस्तोयेव्स्की के उपन्यास 'क्राइम एंड पनिशमेंट' पर आधारित फ़िल्म 'फिर सुबह होगी' का निर्माण किया. चूंकि फ़िल्म समाजवाद पर थी तो उन्होंने साहिर लुधयानवी को बतौर गीतकार लिया. जब संगीतकार की चुनने की बारी आई तो सभी जानते थे कि राज कपूर शंकर-जयकिशन के अलावा कुछ सोचेंगे ही नहीं. राज साहब की ज़्यादातर फ़िल्में का थीम समाजवाद होता था. शंकर-जयकिशन उनके पसंदीदा संगीतकार थे और शैलेंद्र और हसरत जयपुरी गीतकार. जहां शैलेंद्र समाजवादी थे, वहीं हसरत और शंकर-जयकिशन की जोड़ी की कोई एक राजनैतिक विचारधारा नहीं थी. इसलिए राज कपूर की फ़िल्मों के ज़्यादातर गाने कथानक के साथ तो मेल खाते हैं, पर उसके थीम यानी केंद्रीय विचार के साथ कहीं-कहीं तारतम्य नज़र नहीं आता. साहिर यह बात जानते थे. वे अड़ गए कि संगीतकार कोई और ही होगा. साहिर और ख़य्याम 'शगुन' में साथ आ चुके थे और दोनों की एक ही फ़ितरत थी- फ़िल्म उनके मन-मुताबिक़ हो.

रमेश सहगल ने तय किया कि साहिर, राज और ख़य्याम की मुलाकात करवाई जाए. सो सब राज कपूर के घर मिले. राज साहब ने ख़य्याम को लता द्वारा भेंट किया हुआ तानपुरा दिया और कहा कि कुछ सुनाएं, फिर फ़ैसला करेंगे. दोपहर का वक़्त था, ख़य्याम ने राग पूरिया धनाश्री सुनाया. राज कपूर ने फ़िल्म के टाइटल पर धुन बनाने को कहा तो उन्होंने पांच धुनें बना दीं. इन्हें सुनने के बाद राज कपूर रमेश सहगल को लेकर दूसरे कमरे में चले गए. ख़य्याम को लगा कि बात नहीं बनीं. थोड़ी देर बाद दोनों वापस आये और सहगल ने ख़य्याम को गले लगा लिया.

'फिर सुबह होगी' के गाने एक से एक हिट हुए. मुकेश और आशा का गाया 'वो सुबह कभी तो आएगी', 'फिर न कीजे मेरी गुस्ताख़ निगाही का गिला' या समाजवादी सिद्धांत पर ख़ुदा की शख्सियत को नकारने वाला 'आस्मां पे है ख़ुदा और ज़मीं पे हम' और 'चीन-ओ-अरब हमारा, हिन्दोस्तां हमारा, रहने को घर नहीं है, सारा जहां हमारा' बहुत पसंद किये गए. इसके बावजूद साहिर-ख़य्याम की जोड़ी आरके स्टूडियो से नहीं जुड़ सकी.

https://youtu.be/wiSDgIa-zLo

यश चोपड़ा, पंजाबी थीम और ख़य्याम

आज बॉलीवुड की तकरीबन हर दूसरी फ़िल्म में पंजाबी गाने होते हैं. इस ट्रेंड की शुरुआत का श्रेय यश चोपड़ा कैंप के अलावा साहिर और ख़य्याम को भी जाता है. और जिस फिल्म से इसकी शुरुआत हुई वह थी 'कभी-कभी'. यश चोपड़ा पंजाबी पृष्ठभूमि में प्रेम त्रिकोण पर फ़िल्म बना रहे थे. उन्हें ऐसे संगीतकार की ज़रूरत थी जो पंजाब की ढोलक की टाप, टप्पे, गिद्दा और भांगड़ा से वाबस्ता हो. उन्होंने ख़य्याम को लिया. इस फ़िल्म का हर एक गाना ज़बरदस्त हिट हुआ. 'कभी-कभी मेरे दिल में' ने मुकेश को मरणोपरांत फ़िल्मफ़ेयर का सर्वश्रेष्ठ सिंगर अवार्ड दिलाया.

30 साल से संघर्ष कर रहे ख़य्याम को इस फ़िल्म में मिली सफलता ने संगीतकारों की पहली पांत में ला खड़ा किया. इसके बाद तो उन्हें धड़ाधड़ फिल्में मिलने लगीं. इस दौर में कुछ एक मुख्य फ़िल्में थीं- 'चंबल की कसम', 'त्रिशूल' और 'खानदान'.

यहां 'शंकर हुसैन' फिल्म का ज़िक्र बड़ा ज़रूरी है. कमाल अमरोही की फ़िल्म में तीन गीतकार थे. खुद अमरोही ('कहीं एक मासूम नाज़ुक सी लड़की'), जांनिसार अख्तर('आप यूं फ़ासलों से गुज़रते रहे, दिल पे कदमों की आवाज़ आती रही') और कैफ़ भोपाली (अपने आप रातों में'). तीनों के ही गीत एक से बढ़कर एक हैं. पर आख़िरी गाने की बात ही कुछ और है. अब ये लता जी का जादू है, कैफ़ भोपाली के बोल या ख़य्याम का संगीत. नहीं मालूम पर ये गीत कुछ ऐसा बन पड़ा है कि आपको ये गाना ट्रांस में ले जाता है.

https://youtu.be/MPPP1H0Kl3M

पीरियड फ़िल्में, ग़ज़लें और ख़य्याम

एक बार फिर कमाल अमरोही और ख़य्याम 'रज़िया सुल्तान' में साथ थे. 'ऐ दिले नादां' के अलावा कब्बन मिर्ज़ा का गाया हुआ 'आई ज़ंजीर की झंकार ख़ुदा खैर करे' और लता मंगेशकर का गाया हुआ 'जलता है बदन' बेहद शानदार बन पड़े हैं. लताजी मुजरे कम ही गाती थीं, यह सबको मालूम है. पर जलता है बदन के लिए वे ख़य्याम को मना नहीं कर पायीं.

पर जो फ़िल्म ख़य्याम के जीवन में सबसे बड़ा मुक़ाम रखती है वह है 'उमराव जान'. शहरयार की ग़ज़लें और रेखा की अदायगी के साथ उनका संगीत ज़बरदस्त जादू पैदा कर गया. आशा भोंसले की गायकी में अगर एक तरफ़ कई फ़िल्मों के साथ पंचम हैं तो ख़य्याम की एक ही फ़िल्म उन सबकी बराबरी करती है.

इस फ़िल्म में उन्होंने आशा भोंसले की आवाज़ को नए आयाम दिए. इसके बाद ‘बाज़ार’ में मीर तकी मीर की ग़ज़ल ‘दिखाई दिए यूं के बेख़ुद किया’ तो एक शाहकार मौसिकी है.

ख़य्याम ने कम संगीत दिया है. पर जितना भी दिया है उसमें तकरीबन सारी फ़िल्में मील का पत्थर बनीं. कभी किसी के साथ कोई ग़ैर-वाजिब समझौता नहीं किया, किसी की नक़ल नहीं की. कुछ साल पहले उन्होंने अपनी सारी संपत्ति एक ट्रस्ट को दान कर दी.

पहले के निर्माता-निर्देशक संगीत समझते थे, अब ज्यादातर उन्हें सिर्फ व्यापार समझते हैं. वरना क्या बात थी कि ‘वीर ज़ारा’ में आदित्य चोपड़ा (यश चोपड़ा के पुत्र) ने ख़य्याम को न लेकर स्व. मदन मोहन का संगीत लिया था ? पर ख़य्याम को इसका भी गिला नहीं होगा. उनका संगीत हर दौर में सुना जा सकता है. चाहे फिर 2019 ही क्यों न हो. किसी ने कहा है न : ‘सिम्प्लिसिटी एंड आनेस्टी नेवर गो आउट ऑफ़ फ़ैशन.’

साभार- https://satyagrah.scroll.in/ से